जनकक राजधानी

की दिव्य भूमि मिथिला हम आबि गेलौँ ।

देखैत मात्र मन लक्ष्मण तृप्त भेलौँ ॥

की दिव्य फूल फल वृक्ष अनन्त धान ।

पक्षी विलक्षण करै अछि रम्य गान ॥

प्रपूर्ण सत् तड़ाग की, सुधा-समान वारिसौँ

विचित्र पद्मिनी-बनी विहङ्ग बारि-चारिसौँ ।

द्विरेफ गुञ्जि-गुञ्जिकेँ महा मदान्ध घूमिकेँ

सरोजिनीक अङ्ग सुप्त बार-बार चूमिकेँ ॥

शालि-गोप गीतिकाँ सुप्रीति-रीति शूनि-शूनि ।

खेत शस्य खाथि नै कुरङ्ग आँखि मूनि-मूनि ॥

सत्य तीरहूति यज्ञ-भूमि पुण्य देनिहारि ।

शास्त्रकेँ बजैत बेश कीर बैसि डारि-डारि ॥

नदी-मातृक क्षेत्र सुन्दर शस्यसौँ सम्पन्न ।

समय सिरपर होय वर्षा बहुत सञ्चित अन्न ॥

दयायुत नर सकल सुन्दर स्वच्छ सभ व्यवहार ।

सकल-विद्या-उदधि मिथिला विदित भरि संसार ॥

उत्तम हिम-गिरिवर निकट सुलभ रत्न औषधि सकल ।

पुरि महती मिथिला-पुरी ककरहु नहि देखल विकल ॥

शुभ लक्षण संयुक्त मनोगति सुन्दर-सुन्दर ।

उच्चैःश्रवा समान अश्व नृप जेहन पुरन्दर ॥

राज-कुमार उदार सकल विद्याकाँ जनइत ।

शौर्य शील सन्तोष धर्म्मवेत्ता स्मृति मनइत ॥

सकल प्रजा आनन्द-मन विहित गृहाश्रम धर्म्ममत ।

नृपतिक शुभ-चिन्तक सतत नीति-निपुण मन कर्म्ममत ॥

पशु-पक्षीसभ हृष्ट-पुष्ट नहि दुष्ट कुलक्षण ।

कृष्णसार मृग बहुत नृपति कर सभहिक रक्षण ॥

अतिशय जन सौजन्य देश मुनिजन-मनरञ्जन ।

जे ताकी से भेट कतहु नहि सृष्टि एहन सन ॥

मिथिलाभाषा रामायणसँ

All rights reserved… No copy or reproduction allowed